[2021] 1 उम. नि. प. 433

# रवीन कुमार

बनाम

# हिमाचल प्रदेश राज्य

[2011 की दांडिक अपील सं. 2187-88]

26 अक्तूबर, 2020

न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति सूर्यकांत और न्यायमूर्ति ऋषिकेश राय

**स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 (1985 का 61) – धारा 20(ii)(ग) – अभियुक्त के कब्जे से विनिषिद्ध पदार्थ 'चरस' की बरामदगी होना – बरामदगी के स्वतंत्र साक्षी का पक्षद्रोही हो जाना – विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया जाना – अपील न्यायालय द्वारा दोषसिद्ध किया जाना – जहां पक्षद्रोही हो गए स्वतंत्र साक्षी के परिसाक्ष्य से अभियुक्त की मौजूदगी, उसकी तलाशी लेने, विनिषिद्ध पदार्थ के अभिग्रहण और उसके मुहरबंद किए जाने तथा अन्य कानूनी औपचारिकताओं का अनुपालन करने के संबंध में मोटे तौर पर अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन होता हो और पुलिस साक्षियों के साक्ष्य की संपुष्टि होती हों, वहां अपील न्यायालय द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के पुनर्मूल्यांकन के आधार पर की गई अभियुक्त की दोषसिद्धि में हस्तक्षेप करना उचित नहीं होगा ।**

**दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 (1974 का 2) – धारा 378 [सपठित स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 20] – दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील – अपील न्यायालय की हस्तक्षेप करने की व्याप्ति – दोषसिद्धि के निर्णय या दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध की गई अपीलों के बीच दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन अपील न्यायालय की शक्ति, व्याप्ति, अधिकारिता या परिसीमा संबंधी कोई फर्क नहीं है और अपील न्यायालय विधि और तथ्य दोनों के प्रश्नों पर पुनर्विचार करने तथा अभिलेख पर उपलब्ध संपूर्ण साक्ष्य का परिशीलन करने के लिए**

**स्वतंत्र है, तो भी न्याय के हित और निर्दोषिता की उपधारणा के मूलभूत सिद्धांत पर विचार करते हुए इस पर केवल आत्म-अवरोध है ।**

इस अपील के तथ्य इस प्रकार है कि एक पुलिस दल ने संदिग्ध गोला-बारुद के लिए यातायात की जांच-पड़ताल करते समय हिमाचल प्रदेश-जम्मू और कश्मीर सीमा, सुरगांनी के निकट एक मारुति वैन को रोका, जो अपीलार्थी द्वारा चलाई जा रही थी । पुलिस ने छानबीन के दौरान यह पाया कि वैन में घी के पीपे, एक बोरी मक्का, शहद की 20 बोतले, राजमा, अंगीठी, थर्मस, स्टेपनी और कुछ अन्य विविध वस्तुएं लदी हुई थीं । ड्राइवर की सीट के नीचे से एक पोलिथीन की थैली भी खोज निकाली गई थी । इसमें स्वापक पदार्थ होने का संदेह करते हुए पुलिस ने दो स्थानीय दुकानदारों (नाम सिंह, अभि. सा. 1 सहित) को स्वतंत्र साक्षियों के रूप में बुलाया । अपीलार्थी को किसी मजिस्ट्रेट या राजपत्रित अधिकारी की मौजूदगी में तलाशी दिए जाने के उसके कानूनी अधिकार के बारे में सूचित किया गया किंतु उसने पुलिस दल द्वारा ही तलाशी लेने के लिए सहमति व्यक्त की । फिर थैली की अंतर्वस्तुओं की जांच की गई और धूपबती तथा गोलाकार रूप में चरस पाई गई । एक निकटवर्ती दुकान से ली गई तराजू से इसे तौला गया और यह एक किलो 230 ग्राम पाई गई । इस विनिषिद्ध पदार्थ का एक दस ग्राम का नमूना लेने के पश्चात् इस चरस को मुहरबंद और अभिगृहीत किया गया तथा अन्य प्रक्रियात्मक औपचारिकताएं पूरी की गई । अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और दो स्वतंत्र साक्षियों में से एक - नाम सिंह (अभि. सा. 1) का कथन अभिलिखित किया गया । नमूना रासायनिक विश्लेषण के लिए भेजा गया, जहां 34.5 प्रतिशत रेसिन की मात्रा के साथ इसके चरस होने की पुष्टि की गई । तद्नुसार, अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी को स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया । विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा पांच साक्षियों की परीक्षा की गई और अभि. सा. 1 के कथन, अपीलार्थी की तलाशी के लिए लिखित सहमति, बरामदगी ज्ञापन, गिरफ्तारी ज्ञापन, मुद्राएं और स्थल नक्शा सहित विभिन्न दस्तावेज साक्ष्य में प्रस्तुत किए गए । अभियोजन पक्ष द्वारा अभि. सा. 1 को पक्षद्रोही घोषित किया गया क्योंकि उसने चरस के

अभिग्रहण को व्यक्तिगत रूप से देखे जाने की बात से इनकार किया, किन्तु तो भी उसने प्रक्रियात्मक बातों के अनुपालन, बरामद किए गए स्वापक पदार्थ को मुहरबंद करने और अपीलार्थी की मौजूदगी की बाबत मोटे तौर पर अभियोजन पक्ष के पक्षकथन का समर्थन किया । अभि. सा. 2 से अभि. सा. 5 ने, जो पुलिस साक्षी थे, तलाशी, अभिग्रहण और स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन अन्य कानूनी अनुपालनाओं से संबंधित अभियोजन के वृतांत की संपुष्टि की । अपीलार्थी ने, अपनी प्रतिरक्षा में, कोई विनिषिद्ध पदार्थ कब्जे में न रखने की बात से इनकार किया और यह दावा किया कि उसके द्वारा पूर्व में अधिकारिता वाली पुलिस द्वारा आयोजित एक खेलकूद प्रतियोगिता के लिए चंदा देने से इनकार करने को लेकर पुलिस द्वारा आरोप गढ़े गए हैं । तथापि, कोई प्रतिरक्षा साक्षी पेश नहीं किया गया और इसके बजाय अपीलार्थी ने पुलिस साक्षियों के कथनों में विरोधाभासों को उजागर करने पर ध्यान केंद्रित किया । विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने तारीख 10 जुलाई, 1995 को अपने निर्णय द्वारा अपीलार्थी को यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि प्रतिषिद्ध पदार्थ कब्जे में रखने की बात को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है । दोषमुक्ति के निर्णय से व्यथित होकर प्रत्यर्थी-राज्य द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य के आधार पर अभियुक्त-अपीलार्थी को दोषसिद्ध किया गया । अभियुक्त-अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपीलें फाइल की गईं । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपीलों को खारिज करते हुए,

**अभिनिर्धारित** – यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी की दोषमुक्ति प्राथमिक तौर पर इस निष्कर्ष पर आधारित थी कि मामला 'संयोगवश बरामदगी' का मामला नहीं था । विचारण न्यायालय ऐसे निष्कर्ष पर केवल अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी के जमानत के लिए आवेदन के विरोध में तारीख 9 नवम्बर, 1994 को प्रस्तुत किए गए एक लिखित उत्तर में किए गए कतिपय प्रकथनों के आधार पर पहुंचा था । उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में ठीक ही यह उल्लेख किया है कि इस उत्तर दस्तावेज का खंडन करने के लिए अभियोजन पक्ष को कोई अवसर नहीं दिया गया था

और न ही अभि. सा. 5 से इसका सामना कराया गया था । इसके अतिरिक्त, ऐसे उत्तर को तब कोई महत्व नहीं दिया जा सकता है जब स्वयं विचारण न्यायालय ने तारीख 17 नवम्बर, 1994 को जमानत के लिए आवेदन को नामंजूर करते हुए इसका निर्वचन यह निष्कर्ष निकालने के लिए किया था कि पुलिस को "पहले से ही यह जानकारी नहीं थी कि याची अपनी मारुति वैन में चरस ले जा रहा है, यद्यपि, यह प्रतीत होता है कि याची के विरुद्ध ऐसे क्रियाकलापों में अंतर्ग्रस्त होने की साधारण जानकारी थी ।" चूंकि विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए असंगत सामग्री का अननुज्ञेय पूर्वक अवलंब लिया गया था, इसलिए उच्च न्यायालय ने इन निष्कर्षों में हस्तक्षेप करके और इन्हें उलटकर न्यायोचित किया था । विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किसी स्वतंत्र साक्षी ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था और मुख्य पुलिस-साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के परिसाक्ष्य विरोधाभासी थे । ये दोनों मताभिव्यक्तियां अकारण हैं और अभिलेख पर के साक्ष्य द्वारा इनकी संपुष्टि नहीं होती है । इसके विपरीत, उच्च न्यायालय ने तर्कपूर्ण और स्पष्ट कारण दिए हैं कि कैसे अभि. सा. 1 (अभिकथित पक्षद्रोही स्वतंत्र साक्षी) के परिसाक्ष्य से भी सारभूत रूप से अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन होता है । अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के कथनों के बीच विरोधाभास होने के प्रश्न के विषय में न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय की मताभिव्यक्तियां अकाट्य हैं । वास्तव में, यह सुझाव देना स्पष्ट रूप से गलत होगा कि अभि. सा. 5 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि स्वतंत्र साक्षियों को संदिग्ध विनिषिद्ध पदार्थ को पहले ही ड्राइवर की सीट के नीचे से बरामद करने के पश्चात् बुलाया गया था । वास्तव में, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 दोनों ने असंदिग्ध रूप से यह कथन किया था कि पोलिथीन की थैली का निरीक्षण स्वतंत्र साक्षियों के पहुंचने के पश्चात् ही किया गया था । अन्य पदार्थों, जो घी के टिन, शहद, मक्का आदि थे, को हटाने के समय को लेकर कुछ भ्रम हो सकता है, किन्तु ऐसी छुट-पुट बातें तात्विक नहीं हैं । (पैरा 15, 17, 18, 20 और 22)

अपीलार्थी की यह दलील कि उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति का

निष्कर्ष अपास्त नहीं करना चाहिए था, विधिक रूप से निराधार है । अनेक विनिश्चयों द्वारा यह स्थिर किया गया है कि दोषसिद्धि के निर्णयों के विरुद्ध या दोषमुक्ति के विरुद्ध अपीलों के बीच दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन शक्ति, व्याप्ति, अधिकारिता या परिसीमा का कोई फर्क नहीं है । अपील न्यायालय विधि और तथ्य दोनों के प्रश्नों पर पुनर्विचार करने तथा अभिलेख पर संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करने के लिए स्वतंत्र है । तो भी, न्याय के हित और निर्दोषिता की उपधारणा के मूलभूत सिद्धांत पर विचार करते हुए ऐसी शक्ति के प्रयोग पर एक आत्म अवरोध है । अतः, परिपाटी के रूप में, अपील न्यायालय दोषमुक्ति के आदेशों में हस्तक्षेप करने में अनिच्छुक रहते हैं ; विशेष रूप से जब उसी सामग्री के आधार पर दो युक्तियुक्त निष्कर्ष संभव हों । (पैरा 11)

## निर्दिष्ट निर्णय

| | | पैरा |
|---|---|---|
| [2020] | (2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 382 : **हीरा सिंह** बनाम **भारत संघ** ; | 25 |
| [2010] | (2010) 9 एस. सी. सी. 189 : **बाबू** बनाम **केरल राज्य** ; | 12 |
| [2009] | (2009) 4 एस. सी. सी. 271 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **बन्नी** ; | 12 |
| [1998] | (1998) ए. आई. आर. एस. सी. 201 : **कल्पनाथ राय** बनाम **राज्य** ; | 19 |
| [1978] | [1978] 1 उम. नि. प. 875 = (1977) 2 एस. सी. सी. 49 : **सीता राम भाऊ पाटिल** बनाम **रामचंद्र नागो पाटिल** ; | 16 |
| [1974] | [1974] उम. नि. प. 1498 = (1974) 4 एस. सी. सी. 201 : **राम जग** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; | 13 |

[1970] (1970) 3 एस. सी. सी. 474 :
**राम भूपाला रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** । 11

**अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2011 की दांडिक अपील सं. 2187-88.**

**अपीलार्थी की ओर से** श्री एम. सी. ढ़ीगड़ा

**प्रत्यर्थी की ओर से** श्री अभिनव मुखर्जी, अपर महाधिवक्ता, श्रीमती बिहु शर्मा और सुश्री प्रतिष्ठा विज

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति सूर्यकांत ने दिया ।

**न्या. कांत** – ये दांडिक अपीलें विडियो कांफ्रेंसिंग पर सुनी गई ।

2. अपीलार्थी रवीन कुमार ने हिमाचल प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 23 अप्रैल, 2010 को सुनाए गए निर्णय और तारीख 18 मई, 2010 को पारित किए गए उस आदेश को चुनौती दी है, जिसके द्वारा स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम, 1985 की धारा 20 के अधीन उसकी दोषमुक्ति को उलट दिया गया था और इसके बजाय 50,000/- रुपए के जुर्माने सहित दो वर्ष के कठोर कारावास का दंडादेश अधिरोपित किया गया था ।

**तथ्य**

3. संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि तारीख 1 नवम्बर, 1994 को लगभग 3.30 बजे अपराह्न में एक पुलिस दल ने संदिग्ध गोला-बारुद के लिए यातायात की जांच-पड़ताल करते समय हिमाचल प्रदेश-जम्मू और कश्मीर सीमा, सुरगांनी के निकट एक मारुति वैन को रोका, जो अपीलार्थी द्वारा चलाई जा रही थी । पुलिस ने छानबीन के दौरान यह पाया कि वैन में घी के पीपे, एक बोरी मक्का, शहद की 20 बोतले, राजमा, अंगीठी, थर्मस, स्टेपनी और कुछ अन्य विविध वस्तुएं लदी हुई थीं । ड्राइवर की सीट के नीचे से एक पोलिथीन की थैली भी खोज निकाली गई थी । इसमें स्वापक पदार्थ होने का संदेह करते हुए पुलिस ने दो स्थानीय दुकानदारों (नाम सिंह, अभि. सा. 1 सहित) को स्वतंत्र साक्षियों के रूप में बुलाया । अपीलार्थी को किसी मजिस्ट्रेट या

राजपत्रित अधिकारी की मौजूदगी में तलाशी दिए जाने के उसके कानूनी अधिकार के बारे में सूचित किया गया किंतु उसने पुलिस दल द्वारा ही तलाशी लेने के लिए सहमति व्यक्त की । फिर थैली की अंतर्वस्तुओं की जांच की गई और धूपबती तथा गोलाकार रूप में चरस पाई गई । एक निकटवर्ती दुकान से ली गई तराजू से इसे तौला गया और यह एक किलो 230 ग्राम पाई गई । इस विनिषिद्ध पदार्थ का एक दस ग्राम का नमूना लेने के पश्चात् इस चरस को मुहरबंद और अभिगृहीत किया गया तथा अन्य प्रक्रियात्मक औपचारिकताएं पूरी की गई । अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और दो स्वतंत्र साक्षियों में से एक - नाम सिंह (अभि. सा. 1) का कथन अभिलिखित किया गया । नमूना रासायनिक विश्लेषण के लिए भेजा गया, जहां 34.5 प्रतिशत रेसिन की मात्रा के साथ इसके चरस होने की पुष्टि की गई । तद्नुसार, अभियोजन पक्ष ने अपीलार्थी को स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20 के अधीन अपराध के लिए आरोपित किया ।

4. विचारण के दौरान अभियोजन पक्ष द्वारा पांच साक्षियों की परीक्षा की गई और अभि. सा. 1 के कथन, अपीलार्थी की तलाशी के लिए लिखित सहमति, बरामदगी ज्ञापन, गिरफ्तारी ज्ञापन, मुद्राएं और स्थल नक्शा सहित विभिन्न दस्तावेज साक्ष्य में प्रस्तुत किए गए । अभियोजन पक्ष द्वारा अभि. सा. 1 को पक्षद्रोही घोषित किया गया क्योंकि उसने चरस के अभिग्रहण को व्यक्तिगत रूप से देखे जाने की बात से इनकार किया, किन्तु तो भी उसने प्रक्रियात्मक बातों के अनुपालन, बरामद किए गए स्वापक पदार्थ को मुहरबंद करने और अपीलार्थी की मौजूदगी की बाबत मोटे तौर पर अभियोजन पक्ष के पक्षकथन का समर्थन किया । अभि. सा. 2 से अभि. सा. 5 ने, जो पुलिस साक्षी थे, तलाशी, अभिग्रहण और स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन अन्य कानूनी अनुपालनाओं से संबंधित अभियोजन के वृत्तांत की संपुष्टि की । अपीलार्थी ने, अपनी प्रतिरक्षा में, कोई विनिषिद्ध पदार्थ कब्जे में न रखने की बात से इनकार किया और यह दावा किया कि उसके द्वारा पूर्व में अधिकारिता वाली पुलिस द्वारा आयोजित एक खेलकूद प्रतियोगिता के लिए चंदा देने से इनकार करने

को लेकर पुलिस द्वारा आरोप गढ़े गए हैं । तथापि, कोई प्रतिरक्षा साक्षी पेश नहीं किया गया और इसके बजाय अपीलार्थी ने पुलिस साक्षियों के कथनों में विरोधाभासों को उजागर करने पर ध्यान केंद्रित किया ।

5. विद्वान् विशेष न्यायाधीश ने तारीख 10 जुलाई, 1995 को अपने निर्णय द्वारा अपीलार्थी को यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि प्रतिषिद्ध पदार्थ कब्जे में रखने की बात को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित नहीं किया गया है । न्यायालय ने ऐसे निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी के जमानत के लिए अनुरोध का विरोध करने के लिए तारीख 9 नवम्बर, 1994 को दिए गए एक पूर्ववर्ती उत्तर का अत्यधिक अवलंब लिया जिसमें पुलिस ने दावा किया था कि अपीलार्थी "क्षेत्र में एक ठेकेदार के बहाने यान में घुमता रहता है और प्रायिक तौर पर विनिषिद्ध वस्तुओं का लेन-देन करता है । पहले भी तारीख 27 अक्तूबर, 1994 को विश्वसनीय गुप्त सूचना प्राप्त हुई थी कि वह उसी यान में 7 कि.ग्रा. चरस ले जा रहा है । उसका पीछा किया गया था ..... किंतु उसे धबोचा नहीं जा सका था ..... । वह लंबे समय से निगरानी में था ।" विचारण न्यायालय की राय में, इस बात से असंदिग्ध रूप से अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के इन अभिसाक्ष्यों का खंडन होता है कि वे अपीलार्थी को नहीं जानते हैं या पहले से उससे मेल-जोल नहीं है । यह बात भी यह निष्कर्ष निकालने के लिए एकमात्र कारण बना कि पुलिस को वास्तव में अभिकथित तस्करी की पहले से जानकारी थी और संयोगवश बरामदगी कुछ और नहीं अपितु स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम के अधीन विधिक रक्षोपाय की परिवंचना करने के लिए जानबूझ कर रची गई एक कहानी थी जिसके परिणामस्वरूप मामले की बुनियाद ही कमजोर हो गई । विशेष न्यायाधीश ने यह भी उल्लेख किया कि अभि.सा. 2 और अभि. सा. 5 के कथनों में विरोधाभास हैं और एकमात्र स्वतंत्र साक्षी ने अभियोजन के वृत्तांत का समर्थन नहीं किया था ।

6. प्रत्यर्थी-राज्य ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील की, जिसने तारीख 23 अप्रैल, 2010 के निर्णय द्वारा यह अभिनिर्धारित किया कि

विचारण न्यायालय का तर्काधार पूर्णत: भ्रामक है । उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करके यह मत व्यक्त किया कि पहली बात यह कि विचारण न्यायालय ने अभि. सा. 1 के कथन को गलत रूप से त्यक्त किया था क्योंकि उसने अभियोजन पक्ष के वृत्तांत के मुख्य भागों की संपुष्टि की थी और मात्र पोलिथीन की थैली की बरामदगी के बारे में अनभिज्ञ होने का अभिवाक् किया था । दूसरी बात यह कि किसी स्वतंत्र साक्षी के अभाव में भी दोषसिद्धि संभव थी । तीसरी बात यह कि यह दर्शित होता है कि अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के वृत्तांत का कैसे घालमेल किया गया था और इससे कोई संभाव्य विरोधाभास दूर की बात और अतात्विक है । चौथी और सर्वाधिक निर्णायक बात यह है कि अभि. सा. 5 (अन्वेषक अधिकारी) का सामना जमानत के लिए आवेदन के अभियोजन पक्ष के पूर्ववर्ती उत्त्र से नहीं कराया गया था और इस प्रकार अभियोजन पक्ष के वृत्तांत पर संदेह करने के लिए इसका अवलंब नहीं लिया जा सकता था । उच्च न्यायालय ने यह भी राय व्यक्त की कि प्रतिरक्षा पक्ष द्वारा प्रस्तुत की गई आनुकाल्पिक कहानी सोच-समझकर अभि. सा. 5 के सम्मुख नहीं रखी गई थी । इन दो तथ्यों पर विचार करते हुए यह निष्कर्ष निकालने के लिए कुछ नहीं था कि कोई पूर्व सूचना थी और मामला स्पष्ट रूप से एक संयोगवश बरामदगी का था और इस प्रकार स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 42 का पालन करने संबंधी अपेक्षाओं को पूरा किया गया था ।

7. उच्च न्यायालय ने इसके पश्चात् दंडादेश की मात्रा पर अपीलार्थी की सुनवाई की और तारीख 18 मई, 2010 को यह मत व्यक्त करते हुए दंडादेश का एक अलग आदेश पारित किया कि यद्यपि अभिगृहीत चरस की मात्रा 1 किलो 230 ग्राम थी किंतु शुद्ध रेसिन अंश केवल 424 ग्राम था, जो कि एक 'वाणिज्यिक मात्रा' नहीं थी । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी की आश्रिता और विचारण में 15 वर्षों से अधिक के विलंब की बात को सम्यक् महत्व देते हुए उच्च न्यायालय ने दो वर्ष के कठोर कारावास और 50,000/- रुपए के जुर्माने (या इसकी एवज में एक वर्ष का अतिरिक्त करावास) का एक उदार दंडादेश पारित किया ।

**पक्षकारों की दलीलें**

8. अपीलार्थी ने व्यथित होकर अपनी दोषमुक्ति को उलटे जाने को यह प्रकथन करते हुए चुनौती दी है कि उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के सकारण आदेश को अपास्त करके अपनी अधिकारिता से बाहर जाकर कार्य किया है । उसके विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से यह दलील दी गई है कि जब एक बार एकमात्र प्रत्यक्षदर्शी साक्षी ने अभियोजन के पक्षकथन को अस्वीकार कर दिया था, तो पुलिस के वृत्तांत पर भरोसा करके अपीलार्थी को दोषसिद्ध करना अन्यायोचित होगा । तारीख 9 नवम्बर, 1994 के उत्तर की अंतर्वस्तुओं को यह साबित करने के लिए पुन: उठाया गया कि मामला संयोगवश बरामदगी का नहीं था और एक ही तरह के साक्ष्य के आधार पर दो संभाव्य दृष्टिकोण होने की दशा में, उस दृष्टिकोण को अपनाया जाना चाहिए जो दोषमुक्ति का समर्थन करता हो । यह दलील दी गई कि उत्तर न्यायालय का एक अभिलेख होने के कारण इसे दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किसी कथन की भांति साबित किया जाना अपेक्षित नहीं था । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी की अब बढ़ती आयु और बरामद स्वापक पदार्थ की कम मात्रा को देखते हुए उदारता बरतने की ईप्सा की गई ।

9. दोषमुक्ति के लिए और उदारता बरतने के लिए किए गए इन अभिवाकों का राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा कुशलतापूर्वक खंडन किया गया और उन्होंने उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश का समर्थन किया । उन्होंने आग्रह किया कि इस जैसे मामलों में दोषसिद्धि केवल शासकीय साक्षियों के परिसाक्ष्यों के आधार पर, स्वतंत्र साक्षी द्वारा संपुष्टि न करने के बावजूद, भलीभांति संधार्य हो सकती है । उन्होंने यह भी प्रदर्शित किया कि कैसे विचारण न्यायालय ने अननुज्ञेय पूर्वक उत्तर दस्तावेज का अवलंब लिया था जबकि इसे अभि. सा. 5 की प्रतिपरीक्षा के प्रक्रम पर सामने नहीं लाया गया था । यह भी दलील दी गई कि दंडादेश के प्रक्रम पर पहले ही पर्याप्त से अधिक उदारता दिखाई गई है क्योंकि उच्च न्यायालय ने केवल शुद्ध रेसिन अंश के लिए ही दंड

अधिरोपित किया था जबकि मिश्रण के संपूर्ण भार को, इसके उदासीन पदार्थ सहित, विचार में लिया जाना चाहिए था ।

**विश्लेषण**

10. पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को सुनने के पश्चात् और अभिलेख का परिशीलन करने पर हम यह पाते हैं कि इन अपीलों में विधि के निम्नलिखित तीन प्रश्न उद्भूत होते हैं – (क) दोषमुक्ति के निर्णय के विरुद्ध उच्च न्यायालय की अपीली अधिकारिता की व्याप्ति और सार क्या है ? ; (ख) ऐसे किसी दस्तावेज का अवलंब लेने की सीमा क्या है जिससे दूसरे पक्ष का प्रतिपरीक्षा के दौरान सामना नहीं कराया गया हो ? और (ग) क्या स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा न कराने से अभियोजन का पक्षकथन दूषित हो जाता है ? इसके अतिरिक्त, इस बात पर विचार करते हुए कि दंडादेश का प्रश्न पहली बार उच्च न्यायालय के समक्ष उद्भूत हुआ था, प्रस्तुत परिस्थितियों में एक उदार दृष्टिकोण अपनाने की संभाव्यता पर भी विचार किया जाना अपेक्षित है ।

**क. दोषमुक्ति के मामलों में अपील की व्याप्ति**

11. अपीलार्थी की यह दलील कि उच्च न्यायालय को दोषमुक्ति का निष्कर्ष अपास्त नहीं करना चाहिए था, विधिक रूप से निराधार है । अनेक विनिश्चयों द्वारा यह स्थिर किया गया है कि दोषसिद्धि के निर्णयों के विरुद्ध या दोषमुक्ति के विरुद्ध अपीलों के बीच दंड प्रक्रिया संहिता के अधीन शक्ति, व्याप्ति, अधिकारिता या परिसीमा का कोई फर्क नहीं है । अपील न्यायालय विधि और तथ्य दोनों के प्रश्नों पर पुनर्विचार करने तथा अभिलेख पर संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करने के लिए स्वतंत्र है । तो भी, न्याय के हित और निर्दोषिता की उपधारणा के मूलभूत सिद्धांत पर विचार करते हुए ऐसी शक्ति के प्रयोग पर एक आत्म अवरोध है । अतः, परिपाटी के रूप में, अपील न्यायालय दोषमुक्ति के आदेशों में हस्तक्षेप करने में अनिच्छुक रहते हैं ; विशेष रूप से जब उसी सामग्री के आधार पर दो युक्तियुक्त निष्कर्ष संभव हों । (**राम भूपाला रेड्डी** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[1] वाला मामला देखें)

---

[1] (1970) 3 एस. सी. सी. 474.

12. **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **बन्नी**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अति उदाहरण सहित उन परिस्थितियों को सूचीबद्ध किया था जहां दोषमुक्ति के विरुद्ध अपील न्यायालय का हस्तक्षेप न्यायसंगत होगा । इनमें विधि की स्पष्ट गलती, न्याय की गंभीर हानि या तथ्य संबंधी अनुचित निष्कर्ष सम्मिलित होंगे । इसके पश्चात्, **बाबू** बनाम **केरल राज्य**[2] वाले मामले में यह स्पष्ट किया गया कि "किसी न्यायालय द्वारा अभिलिखित तथ्य संबंधी निष्कर्षों को अनुचित होना ठहराया जा सकता है यदि ऐसे निष्कर्ष सुसंगत सामग्री की अनदेखी या अपवर्जन करके या असंगत/अग्राह्य सामग्री पर विचार करके निकाले गए हैं" या यदि वे 'साक्ष्य के महत्व के विरुद्ध' हैं या यदि वे 'अविवेक की त्रुटि' से ग्रस्त हैं ।

13. इसके अतिरिक्त, यह न्यायालय अनुच्छेद 136 के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए सामान्य तौर पर केवल इस बात की परीक्षा करेगा कि क्या उच्च न्यायालय दोषमुक्ति के विरुद्ध अपीलों को शासित करने वाले इन सिद्धांतों को ठीक प्रकार से लागू करने में असफल रहा था । वह मत उद्धृत करना ठीक ही फायदाप्रद होगा जो इस न्यायालय ने **राम जग** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] वाले मामले में व्यक्त किया था :-

> "14. यदि इन सिद्धांतों को लागू करने के पश्चात् निर्णय में उनका यंत्रवत् पुनरुल्लेख न करके, उच्च न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा हो कि दोषमुक्ति के आदेश को उलट देना चाहिए तो यह न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन उसके समक्ष प्रस्तुत अपीलों में साक्ष्यों का पुनर्मूल्यांकन नहीं करेगा । ऐसी अपीलों में साक्ष्य की केवल ऐसी परीक्षा मामूली तौर पर आवश्यक होगी जैसी कि यह देखने के लिए अपेक्षित है कि क्या उच्च न्यायालय ने सिद्धांतों को सही तौर पर लागू किया है या नहीं ।

---

[1] (2009) 4 एस. सी. सी. 271.

[2] (2010) 9 एस. सी. सी. 189.

[3] [1974] उम. नि. प. 1498 = (1974) 4 एस. सी. सी. 201.

> उच्च न्यायालय तथ्यों पर विचार करने वाला अंतिम न्यायालय है और अनुच्छेद 136 के अधीन इस न्यायालय की आरक्षित अधिकारिता, यद्यपि व्यापक अर्थों में वर्णित है, तो भी रूढ़ि द्वारा उन आपवादिक मामलों में प्रयोग की जाती है जहां उच्च न्यायालय ने दोषमुक्ति के विरुद्ध अपीलें विनिश्चित करने के लिए इस न्यायालय द्वारा निश्चित पथ-प्रदर्शक रीति की उपेक्षा की हो या "विधिक प्रक्रिया के स्वरूप की अवहेलना या नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का कोई उल्लंघन या अन्यथा सारवान् और गंभीर अन्याय किया गया हो" या जहां निष्कर्ष ऐसा हो जिससे न्यायालय के विवेक को आघात पहुंचता हो । .... सही सिद्धांतों का प्रयोग करके निकाले गए निष्कर्ष से न्यायिक विवेक को आघात नहीं पहुंच सकता है और यह न्यायालय सिवाय उन परिस्थितियों के अपने अंत:करण को प्रकट करना नहीं चाहता जहां परिसाक्ष्य के निर्धारण के ज्ञात तथा मान्य कसौटियों की पूर्णत: अवहेलना की जाती है ; अन्यथा अंत:करण निरर्थक हो जाएगा ।"

14. अत:, हमारे लिए मात्र इस आधार पर संपूर्ण साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन करने की आवश्यकता नहीं है कि उच्च न्यायालय ने अपनी अपीली अधिकारिता का प्रयोग करते हुए अपीलार्थी को पहली बार दोषसिद्ध किया था । इसके बजाय, प्रस्तुत अपीलों की व्याप्ति यह परीक्षा करने तक निर्बंधित होनी चाहिए कि क्या विचारण न्यायालय का आदेश वास्तव में अनुचित था और क्या उच्च न्यायालय द्वारा किया गया साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन और पारिणामिक दोषसिद्धि तर्कपूर्ण साक्ष्य पर आधारित थी ।

**(ख) जमानत के लिए आवेदन पर अभियोजन पक्ष के उत्तर का अवलंब**

15. यह स्पष्ट है कि अपीलार्थी की दोषमुक्ति प्राथमिक तौर पर इस निष्कर्ष पर आधारित थी कि मामला 'संयोगवश बरामदगी' का मामला नहीं था । विचारण न्यायालय ऐसे निष्कर्ष पर केवल अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी के जमानत के लिए आवेदन के विरोध में तारीख 9

नवम्बर, 1994 को प्रस्तुत किए गए एक लिखित उत्तर में किए गए कतिपय प्रकथनों के आधार पर पहुंचा था ।

16. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस द्वारा अभिलिखित किए गए कथनों की तुलना में किन्हीं लंबित कार्यवाहियों में न्यायालय में प्रस्तुत किए गए उत्तरों के बीच के प्रभेद को ऋजुपूर्वक विवादग्रस्त नहीं कर सके । बहरहाल, न्यायालय को ऐसे साक्ष्य का अवलंब लेने में अधिक सचेत रहना चाहिए जिससे संबंधित साक्षी का सामना ऐसा करने का अवसर होने के बावजूद न कराया गया हो । यद्यपि, विचारण के दौरान प्रकट होने वाले न्यायालय के अभिलेख को अलग से साबित करने की आवश्यकता नहीं है किन्तु ऐसे दस्तावेजों की अंतर्वस्तुओं की सत्यता के संबंध में कोई विधिक उपधारणा नहीं की जा सकती है । न्यायालय की कार्यवाहियों में फाइल किए गए उत्तर को, अधिक से अधिक, एक स्वीकारोक्ति के रूप में समझा जा सकता है जिसे, जैसा कि **सीता राम भाऊ पाटिल** बनाम **रामचंद्र नागो पाटिल**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, न केवल अवश्य साबित किया जाना चाहिए अपितु प्रतिपरीक्षा के प्रक्रम पर विरोधी पक्षकार का भी इससे अवश्य सामना कराया जाना चाहिए । उद्धृत निर्णय का निम्नलिखित आशय का उद्धरण देना उपयुक्त होगा :-

> "17. यदि स्वीकृति साबित कर दी गई है और यदि उसके पश्चात् उसका प्रयोग उस पक्षकार के विरुद्ध किया जाना है जिसने यह स्वीकृति की हो तो मामला साक्ष्य अधिनियम की धारा 145 के उपबंधों के भीतर आ जाता है । भारतीय साक्ष्य अधिनियम के इन उपबंधों पर कि 'स्वीकृति निश्चायक सबूत नहीं है' साक्ष्य के दो लक्षणों के संबंध में विचार किया जाना है । प्रथमतः, स्वीकृति को कितना महत्व दिया जाना है ? महत्व देने के लिए यह पता लगाना होगा कि क्या स्वीकृति स्पष्ट, असंदिग्ध और सुसंगत साक्ष्य है । द्वितीयतः, यदि यह साबित कर दिया जाए कि

[1] [1978] 1 उम. नि. प. 875 = (1977) 2 एस. सी. सी. 49.

स्वीकृति साक्ष्य अधिनियम के उपबंधों के अनुसार है और यदि इसका प्रयोग उस पक्षकार के विरुद्ध किया जाना है जिसने यह स्वीकृति की है तो भी यह उचित है कि यदि साक्षी की शपथ पर प्रतिपरीक्षा की जा रही हो और उन दस्तावेजों का प्रयोग उसके विरुद्ध किया जाना है तो अपना स्पष्टीकरण देने और संदिग्ध या विवादग्रस्त बात को स्पष्ट करने का अवसर दिया जाना चाहिए । यह सामान्य, उपयोगी और बोधगम्य नियम है । .....। इसलिए जिस व्यक्ति की स्वीकृति होने का अभिकथन है, उसका साक्ष्य समाप्त हो जाने के पश्चात् स्वीकृति का मात्र सबूत निरर्थक है और इसका प्रयोग उसके विरुद्ध नहीं किया जा सकता है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है ।)

17. उच्च न्यायालय ने प्रस्तुत मामले में ठीक ही यह उल्लेख किया है कि इस उत्तर दस्तावेज का खंडन करने के लिए अभियोजन पक्ष को कोई अवसर नहीं दिया गया था और न ही अभि. सा. 5 से इसका सामना कराया गया था । इसके अतिरिक्त, ऐसे उत्तर को तब कोई महत्व नहीं दिया जा सकता है जब स्वयं विचारण न्यायालय ने तारीख 17 नवम्बर, 1994 को जमानत के लिए आवेदन को नामंजूर करते हुए इसका निर्वचन यह निष्कर्ष निकालने के लिए किया था कि पुलिस को "पहले से ही यह जानकारी नहीं थी कि याची अपनी मारुति वैन में चरस ले जा रहा है, यद्यपि, यह प्रतीत होता है कि याची के विरुद्ध ऐसे क्रियाकलापों में अंतर्ग्रस्त होने की साधारण जानकारी थी ।"

18. चूंकि विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्ति के निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए असंगत सामग्री का अननुज्ञेय पूर्वक अवलंब लिया गया था, इसलिए उच्च न्यायालय ने इन निष्कर्षों में हस्तक्षेप करके और इन्हें उलटकर न्यायोचित किया था ।

**(ग) स्वतंत्र साक्षियों की आवश्यकता**

19. इस बात का खंडन करना होगा कि स्वतंत्र साक्षियों की कमी अभियोजन पक्षकथन के लिए घातक नहीं है (**कल्पनाथ राय** बनाम

**राज्य**[1] वाला मामला देखें) । तथापि, ऐसे लोप से पुलिस अधिकारियों के परिसाक्ष्यों की संवीक्षा करते समय न्यायालयों का अधिक सावधानी बरतने का कर्तव्य हो जाता है और यदि वे परिसाक्ष्य विश्वसनीय पाए जाते हैं तो उनके आधार पर एक सफलतापूर्वक दोषसिद्धि की जा सकती है ।

20. विचारण न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि किसी स्वतंत्र साक्षी ने अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन नहीं किया था और मुख्य पुलिस-साक्षियों अर्थात् अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के परिसाक्ष्य विरोधाभासी थे । ये दोनों मताभिव्यक्तियां अकारण हैं और अभिलेख पर के साक्ष्य द्वारा इनकी संपुष्टि नहीं होती है । इसके विपरीत, उच्च न्यायालय ने तर्कपूर्ण और स्पष्ट कारण दिए हैं कि कैसे अभि. सा. 1 (अभिकथित पक्षद्रोही स्वतंत्र साक्षी) के परिसाक्ष्य से भी सारभूत रूप से अभियोजन के पक्षकथन का समर्थन होता है ।

21. यद्यपि, अभियोजन पक्ष द्वारा पक्षद्रोही घोषित किए गए नाम सिंह (अभि. सा. 1) ने साक्षर होने और घटनास्थल पर अपने कथन पर हस्ताक्षर करने की बात को स्वीकार किया है । प्रतिपरीक्षा के दौरान, उसने स्वीकार किया कि उसने इन दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने से पूर्व इनकी अंतर्वस्तुओं का सम्यक् रूप से परिशीलन किया था और पुलिस का किसी प्रकार का दबाव नहीं था, इस प्रकार, किसी मौखिक कथन को संजीदगी से उसके प्रतिकूल कमजोर बनाया गया है । उसके अभिसाक्ष्य से स्वतंत्र रूप से यह सिद्ध होता है कि अपीलार्थी की मारुति वैन को वास्तव में रोका गया था, अपीलार्थी की सहमति ली गई थी, तलाशी ली गई थी, कतिपय वस्तुएं अभिगृहीत की गई थीं और कुछ पदार्थ तौला गया था और मुहरबंद किया गया था । यद्यपि, अभि. सा. 1 ने विनिर्दिष्ट रूप से चरस के अभिग्रहण को न देखे जाने का दावा किया था, किन्तु उसने दोनों बातों में से एक से इनकार नहीं किया था । उसने यह कथन किया था कि वह तलाशी के प्रक्रम पर कुछ ग्राहकों को संभालने के लिए अपनी दुकान पर वापस चला गया था । तथापि, उसने

---

[1] (1998) ए. आई. आर. एस. सी. 201.

चरस के निकाले गए नमूने को दिखाए जाने की बात स्वीकार की थी और उसने विचारण न्यायालय के समक्ष इसकी शनाख्त की थी । इस प्रकार, अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को कमजोर बनाने की बात तो दूर, अभि. सा. 1 के कथन से मोटे तौर पर अपीलार्थी के कब्जे से विनिषिद्ध पदार्थ के अभिग्रहण की बात की संपुष्टि और दृढ़ होती है ।

22. अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 के कथनों के बीच विरोधाभास होने के प्रश्न के विषय में हमारा यह निष्कर्ष है कि उच्च न्यायालय की मताभिव्यक्तियां अकाट्य हैं । वास्तव में, यह सुझाव देना स्पष्ट रूप से गलत होगा कि अभि. सा. 5 ने यह अभिसाक्ष्य दिया था कि स्वतंत्र साक्षियों को संदिग्ध विनिषिद्ध पदार्थ को पहले ही ड्राइवर की सीट के नीचे से बरामद करने के पश्चात् बुलाया गया था । वास्तव में, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 5 दोनों ने असंदिग्ध रूप से यह कथन किया था कि पॉलिथीन की थैली का निरीक्षण स्वतंत्र साक्षियों के पहुंचने के पश्चात् ही किया गया था । अन्य पदार्थों, जो घी के टिन, शहद, मक्का आदि थे, को हटाने के समय को लेकर कुछ भ्रम हो सकता है, किन्तु ऐसी छुट-पुट बातें तात्विक नहीं हैं ।

**(घ) दंडोदश में उदारता**

23. अपीलार्थी की आयु और अन्य परिस्थितियों तथा विचारण और अपील में विलंब की बात पर अति उदारतापूर्वक विचार करने के पश्चात् हमारा यह विचार है कि दो वर्ष के कठोर कारावास और 50,000/- रुपए के जुर्माने के दंडादेश, जो उच्च न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत किया गया है, के साथ छेड़छाड़ न करने मात्र से न्याय के हितों की पूर्ति हो जाएगी ।

24. हमारा यह कहने का कारण यह है कि अपराध कारित करने के समय पर और अपील के प्रक्रम दोनों पर विधि में न्यूनतम आज्ञापक दंडादेश दस वर्ष से अन्यून की अवधि के किसी कारावास तक प्रतिषिद्ध किया गया है । स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20(ii) में, जैसी कि वह 2001 के संशोधन से पूर्व थी (2001 के अधिनियम सं. 9 की धारा 7), यह विनिर्दिष्ट किया गया था कि जहां

उल्लंघन गांजा से भिन्न कैनीबस के किसी रूप के संबंध में है, तब ऐसा उल्लंघन ऐसे "कठोर कारावास से दंडनीय होगा जो दस वर्ष से कम नहीं होगा किंतु जो बीस वर्ष तक हो सकेगा और जुर्माने के लिए भी दायी होगा जो एक लाख रुपए से कम का नहीं होगा और जो दो लाख रुपए तक का हो सकेगा ।"

25. इसी प्रकार, स्वापक ओषधि और मन:प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 20(ii)(ग) में, जैसी कि यह 2001 के संशोधन के पश्चात् है, कैनीबस की 'वाणिज्यिक मात्रा' को कब्जे में रखने के लिए दस वर्ष का ही न्यूनतम आज्ञापक दंड विनिर्दिष्ट है । उच्च न्यायालय ने, चूंकि उस समय विधि का गलत अर्थान्वयन किया जा रहा था, 424 ग्राम शुद्ध रेसिन अंश की मात्रा का अवलंब लिया था । इसके बजाय, चूंकि अब **हीरा सिंह** बनाम **भारत संघ**[1] वाले मामले में इस न्यायालय की एक समन्वय न्यायपीठ द्वारा स्पष्ट किया जा चुका है, मिश्रण की कुल मात्रा, जिसमें उदासीन पदार्थ भी सम्मिलित है, दंडादेश देने के प्रयोजनों के लिए सुसंगत होनी चाहिए । प्रस्तुत मामले में, कुल मात्रा एक किलो 230 ग्राम है, जो तारीख 19 अक्तूबर, 2001 की अधिसूचना का. आ. 1055(ई) में क्रम सं. 23 पर यथाविनिर्दिष्ट 'वाणिज्यिक मात्रा' से अधिक है । अत:, उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया दंडादेश स्पष्ट रूप से पहले ही परोपकार से भी अधिक है ।

**निष्कर्ष**

26. पूर्वोक्त कारणों से, ये अपीलें खारिज की जाती हैं । अपीलार्थी के जमानत बंधपत्र रद्द किए जाते हैं और प्रत्यर्थी-राज्य को निदेश दिया जाता है कि अपीलार्थी को उसके दो वर्ष के दंडादेश के शेष भाग को भुगतने के लिए अभिरक्षा में लिया जाए ।

अपीलें खारिज की गईं ।

जस.

---

[1] (2020) एस. सी. सी. ऑनलाइन एस. सी. 382.